मनुष्य बनो

अप्रैल १९८३

वा० मू० ८-००

5/83

शरणागति, शुभ संकल्प,

क्षमा, प्रेम,

निष्काम कर्म, ब्रह्मचर्य पालन,

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टिकोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार, सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है। मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायगा।

४—किसी धर्म, पंथ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जाँय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ साफ अवश्य लिखना चाहिये। उत्तर के लिये जबावी कार्ड आना चाहिये वी० पी० पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायगी। इसका वार्षिक मूल्य ८—०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुँचे तो पहले अपने य[illegible] डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर मिले व अगला अ[illegible] निकलने से एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी [illegible] बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैने[illegible] के नाम से भेजने चाहिये। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ [illegible] लिखना चाहिये। और पते की तबदीली भी।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

R. S.

ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमिदं: पूर्णात्पूर्ण मदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

❋ मनुष्य बनो ❋

वर्ष ३३	चैत्र संवत २०३१ वि०	सं० ६

माया भ्रम

ठगनी आई ठगन संसार ।।टेक।।

रमा के रूप में विष्णु को लूटा, पारवती त्रिपुरारि ।
गायत्री बन ब्रह्म ही घाला, माया चंचल नारि ॥ ठगनी० ॥

भक्ति भाव लख भक्त लुभाने, ज्ञानी ज्ञान हंकार ।
योगी ऋद्धि सिधि ने निधि भूले. माया महा बरियार ॥ठगनी०॥

ब्राह्मण बरन गोत्र कुल पाखँड, क्षत्री भुज बल भार ।
शूद्र मोह वैश्य धन दौलत, माया का भेष अपार ॥ ठगनी०॥

माया अगुन सगुन की मूरत, निराकार साकार ।
तीरथ बरत कर्म और धरमा माया नरक विचार ॥ ठगनी० ॥

एक बचा सतगुरु का सेवक, टेक गुरु की धार ।
राधास्वामी बल ले भया बलवाना, माया को दिया पछार ॥ ठगनी ॥

दयाल मत

लेखक—महर्षि शिव व्रत लाल वर्मन

माया मत और काल मत की समझ सम्भवत: अब किसी अंश तक आ जानी चाहिए, यद्यपि वह सुगम नहीं है। काल में अहंकार का दोष रहता है और यही अनेकता या जगत के कारोबार का प्रवर्तक भी है। इसी में घटनायें होती रहती हैं। इससे समानता है भी और नहीं भी है। यह इतना सूक्ष्म तत्व है कि इसकी व्याख्या कठिन हो जाती है और आदमी को इसका समझना भी कठिन हो जाता हैं। काल स्वयं अद्वैत का तत्व है जिससे द्वैत की सुगन्ध की लपटें उसको बिना हानि पहुंचाये ही उड़ती रहती हैं। काल एक है और उस एक की दृष्टि से उसे सार तत्व वर्णन किया गया है। मगर वह असल में एक ऐसी सत्ता है कि जिस तक मन और बुद्धि की पहुंच होतीं और इस हालत में चूंकि उसकी व्याख्या नहीं की जा सकती है, उसे परम तत्व स्वीकार करने की अत्यन्त आवश्यकता होती है।

काल एक समुद्र है जिसमें लहरें उठती हैं। समुद्र तो समुद्र ही है। समुद्र की समझ तक तो उसमें अद्वैत है लेकिन जहाँ दृष्टि उसकी लहरों की ओर आ जाती है, द्वैत की सत्ता का उसमें भान होता है। समुद्र में अद्वैत है और लहरों में द्वैत है।

अद्वैत की दृष्टि से काल को सार तत्व कहा गया है और द्वैत की दृष्टि में उसी से माया का प्रादुर्भाव होता है। जो समुद्र है वही लहर है। जो ब्रह्म है वही माया है और इस दृष्टि से जीव और ब्रह्म की एकता है। यह काल ही ब्रह्म है जो सर्व व्यापक है और जहां तक रचना है वहां तक इसकी सीमा है।

इन दोनों शब्दों काल और माया का इतना विस्तृत वर्णन है कि जो कुछ कहा जाता है वह सब इन्ही के पेट और लपेट में आ जाता है।

गिनती निकलती हैं वह सब इकाई ही पर निर्भर है। इकाई एक है और दहाई सैकड़ा, लाख, करोड़, और नील, पदम, संख, महासंख अनेक हैं। इकाई के साथ शून्य लगाने से वह बढ़ती हुई दिखाई देती है, मगर वास्तविक रूप से शून्य का कोई मूल्य नहीं है। शून्य इकाई के बिना कोई हैसियत नहीं रखता। यह इकाई ही चक्कर खाती हुई गिनती की समस्त संख्याओं में सम्मिलित रहती है। इसे निकाल दो तो फिर कुछ नहीं रहता। जो कुछ इस रचना में प्रतीक होता है वह यही है। जब तक गिनती को गिनती कहा जाता है तब तक वह अद्वैत रहता है और जहाँ हिसाब-किताब और लेखा की बारी आई, उसमें सीमा और असीमा दोनों प्रकार की मर्यादा शामिल होने लगती हैं। उस दृष्टि से गिनती भी सीमित हुई और असीमित भी हो गई। हिसाब तो हिसाब ही है, चाहे वह संख और नील पदम का हिसाब हो : चाहे एक-दो चार का हिसाब हो। हिसाब में सीमा और असीमा दोनों ही हैं। उनकी उस हैसियत को कोई नहीं छीन सकता।

ठीक इसी प्रकार इस रचना के जिस सामान पर दृष्टि डालो, उसमें दोनों सीमा और असीमा सदा मौजूद रहती हैं। जहाँ हद बन्दी है वहाँ माया है और जहाँ बेहदी हैं वहाँ काल है।

समुद्र तो समुद्र ही है। वह विस्तृत क्षेत्र में भी रहता है और एक-एक बूंद में भी मौजूद हैं।

प्रकाश तो प्रकाश हैं। परमाणु की चमक, बिजली की दमक और जुगनू की जगमाहट भी प्रकाश है और सूर्य या सूर्य से और भी अधिक किसी प्रकाशवान वस्तु के प्रकाश को भी प्रकाश कह सकते है।

हवा तो हवा ही है। आंधी का प्रबल झोका भी हवा है और प्रातःकाल के जो धीमे-धीमे झोंके बहते हैं, वह भी हवा है आदि-आदि। इसी प्रकार और सब वस्तुऐं अर्थात् आग, मिट्टी, पानी और इनसे मिश्रित वस्तुओं को भी समझ लो। वह अपने मण्डल में एक और अनेक, सीमित और असीमित दोनों हैं।

उदाहरण असंख्य दिये जा सकते हैं। सोना अपने स्वर्ण मण्डल में एक

है। लेकिन अँगूठी, झूमर, कड़े, कंगन, पहुंची, हार, गुलूबन्द, बाजूबन्द, जोशन आदि आभूषण और कटोरा, ग्लास, तश्तरी और थाली आदि बर्तनों की दृष्टि से अनेक हैं। मिट्टी अपने मिट्टी के मण्डल में एक है और बर्तन-भाढ़ें, पहाड़, कंकड़ पत्थर, लाल, हीरे, जवाहरात, मकान महल और दूसरे सामान के ख्याल से अनेक दिखाई देती है। इस तरह जिस वस्तु को देखोगे हर एक वस्तु में अद्वैत और द्वैत दृष्टिगोचर होगा। कोई स्थान उनसे खाली नहीं है और न हो सकता है। अद्वैत दृष्टी को हर जगह अद्वैत दिखाई देगा। और द्वैत वादियों को हर जगह द्वैत के दृश्य आँखों के सामने रहेंगे। यह अद्वैत काल है और द्वैत माया है। यह दोनों के नाम हैं और यही इन दोनों के रूप भी हैं। नाम और रूप दोनों ही द्वैत के स्थान से सम्बन्ध रखते हैं।

इस काल और माया के विभिन्न नाम हर पंथ में आये हैं। काल को पुरुष कहा गया है और माया को प्रकृति का नाम दिया गया है काल को रूह (आत्मा) और माया को माद्दा (स्थूल पदार्थ) बताया गया है। उपनिषद जोरदार शब्दों में उन्हीं के गीत गाते हुये जिज्ञासुओं के आध्यात्मिक भावों के उभारने का प्रबन्ध करते हैं।

समस्त पंथों ने या तो प्रकृति की पूजा है या पुरुष की उपासना पर जोर दिया गया है। अब गौर करना है कि जहाँ एक होगा वहाँ अनेक अवश्य होगा। इकाई के साथ दहाई और सैकड़ा आदि अवश्य ही होगा। उससे उसको पृथक करना कठिन काम है। योगी हजार योग का साधन करके समाधि लगायें मगर जब उत्थान होगा वह जहाँ के तहाँ आजायेंगे। चढ़ने वाला गिरता है। बैठन वाला उठता है सोने वाला जागता है। जागने वाला सोता है। एक हमेशा अनेक के झगड़े में फँसा रहेगा। ज्ञानी हजार विचार करे, एक समय में अद्वैत के सिद्धान्त पर बुद्धि को एकाग्र करे, लेकिन क्या एकाग्रता के पश्चात उसकी चित्त की वृत्ति अनेक के क्षोभ से स्वतन्त्र हो सकती है!

आपेक्षिक अवस्थाओं के मंडल में रहने वाले आपेक्षिक मद्दों से ऊपर नहीं आ सकते। यह मानी हुई बात है। शेष पृष्ठ ३१ पर

(गतांक पृष्ठ २८ से आगे)

उनकी स्त्री का नाम समदा था। उस देवी की कोख से लाल दास पैदा हुये। पैदायश का साल सम्बत् १५५७ बताया जाता है। इस लड़के में बचपन ही में वह गुन मौजूद थे जो एक सच्चे फकीर में होने चाहिये। पाँच वर्ष की उम्र तक किसी को यह पता नहीं चला कि आखिर कुदरत ने इस बच्चे का का जन्म किस उद्देश्य की पूर्ति के लिये दिया है। इसी बीच एक समय एक हाथी उस गाँव में आया। हाथी लाल दास की ओर अपने आप ही मुड़ा और एक बड़ी सहानुभूति के साथ सूँड़ हिलाता। हिला हिला कर उनके साथ प्रेम का व्यवहार करने लगा। महावत को यह हाल देखकर आश्चर्य हुआ। उसने समझा कि यह बालक एक विशेष प्रकार का है। उसने उनको (लाल दास) नमस्कार की और कहते हैं कि उन से उपदेश भी लिया।

पेशा—माँ बाप गरीब थे और उस कारण लाल दास रोज जंगल जाते और लकड़ी काट कर लाते और अलवर में बेच कर उनकी कीमत से अपना निर्वाह करते थे। एक दिन की बात है कि जब यह लकड़ियाँ काट कर अलवर को ला रहे थे तो राह में एक साधू गदन नाम का मिला और उसने इनको परमारथ की शिक्षा दी और दुनिया में धर्म प्रचार का आदेश दिया। लाल दास ने कहा।

या दुनिया का डर मोहि लागे। जैसे छाँह धूप से भागे।
साँच कहूँ कुल माने झूँठी, या दुनिया की बात अनूठी।
अपने पाप आप ही जले, आप ही भरमे गिल्ला करे।

मदन ने जी जबाब दिया।

मदन कहे तुम डर मत मानो, दीन दुरुस्त को दुर मत मानो
हिन्दू तुर्क को राह लखाओ, दुरमति कुतिया दूर वहावो।
हिन्दू तुर्क का ऐसा हेत, जैसे धरा बीज का खेत।

इहाँ गदन को चिश्ती तिजारे वाला भी कहा है।

त्याग नहीं किया। हक व हलाल की कमाई पर ही अपना जीवन निर्वाह करते रहे और जो कोई भूखा माँदा आता तो उसके लिये फकीर का दरवाजा सदा खुला रहता था।

वाधोली करते गुजरान, मन नहिं राखें मान गुमान।
नाम लेंय और दीन कमावें, उधम करें और खायें खिलायें।
उधम करत न आवे लाज, ज्यों तरुबर फले विराने काज।

इस जगह औरों के अतिरिक्त एक बनिया इनका शिष्य बना जिसको परमारथ की शिक्षा दी। जब जेठ का महीना आया और जोर की धूप पड़ने लगी। उस समय तप करने का विचार किया। परन्तु लालदास का तप पंच अग्नि तापने वालों का तप नही था किन्तु वह सुरत शब्द योग का अभ्यास था जिसके विषय में उनका जीवन चरित्र लिखने वाला इस प्रकार संकेत करता।

वाधोली करते गुजरान, शैल शिखर चढ़ करते ध्यान।
जेठ मास तप ऐसा करें, मन को खेंच सुन्न में धरें।
सिंध शिला पर आनन माँढे, नीचे सिंध गुजारें ठाडें।
सिंध सर्प का शंक न मानी, वह सतगुरु मत वादी ज्ञानी।
या तप को निश्चय कर जानो, पर हक त्यागो हक पहिचानो।
याही शब्द जो माने कोई, आवागवन मिटावे सोई।

लालदास जी का दया भाव : वाधोली में एक अल्लई नाम का तेली उनका सेवक बना। गुरु ने दया करके उसको यह आदर सम्मान प्रदान किया और वह उनका बड़ा श्रद्धालु हो गया। संयोग की बात कि एक दिन जब वह महात्मा जी सतसंग करा रहे थे कि एक दुश्चरित्र स्त्री बड़े श्रद्धा भाव से उनके दर्शन करने हेतु आयी। अल्लई तेली ने बड़ी एक डाट डपट से काम लिया और दर्शन कराने से इनकार कर दिया। वह स्त्री खिसियानी सी होकर उलटे पाँव लौट गयी। क्योंकि अल्लई ने नादानी से सभा में उसका अपमान कर दिया था। लालदास जी उस पर बहुत नाराज हुए और कहने लगे कि यदि कोई आदमी पाप करता है तो तेरा क्या बिगड़ता है। अगर

वह अपराधी है तो अपने मालिक का अपराधी है जो जैसा करता है वैसा फल पाता है परन्तु यदि कोई आदमी किसी पापी के पापों का भण्डा फोड करता है, उस का अपमान करता है तो वह स्वयं अपराधी हो जाता है

जो कोई करे सो भुगते आप, जाको जाय लगत है पाप ।
वाको कीनो पर्दा फाश, जाको तोय लगत है दोष ।

लालदास जी ने तेली की इज्जत छीन ली और जब वह बहुत अनुनय विनय करने लगा तब उसको क्षमा किया और आगे के लिये होशियार रहने के लिये चेतावनी दी दूसरी बार वही औरत फिर आयी और पूछने लगी कि लालदास जी कहाँ है ? अल्लई ने कहा तू परशाद ले और अपनी बात कह उसने जबाब दिया कि न मझे परसाद की जरूरत है और न कोई बात करने की मैं केवल लालदास जी के दर्शन के लिये आयी हूँ जिस समय यह बातें हो रहीं थीं, लालदास जी अन्दर बैठे हुये थे बातों को सुना तो औरत को अन्दर बुला लिया और दर्शन दिया और अल्लई को फिर समझाया कि तुम मान, बड़ाई रौब दाव के विचारों में डूबे हो ऐसा न करना चाहिये ।

मान बड़ाई जगत में करत फिरे अभिमान ।
शब्द भेद जाना नहीं, लखा न गुरु का ज्ञान ।

कुछ समय तक सतसंग कराने पर तीन सौ साठ लोग इनके शिष्य हो गये और परमारथ का शिलशिला शुरू हुआ । लालदास जी शिष्टाचार के मानो साक्षात् अवतार ही थे । बहुत कम लोग इनकी बातों को समझते थे पर यह दया और मिहर के साथ उन्हें समझाया ही करते थे । दुनिया का सचमुच यही हाल है ।

ने लोगों पर अत्याचार एवं अविश्वास फैला रखा था और इधर लाल दास जी सबको आत्मिक शान्ति देकर मालिक की ओर लगाते थे। हिन्दू हो चाहे मुसलमान सब पर उनकी एक सी ही दयादृष्टि रहती थी। अहलकारों ने फौजदार के कान भरना शुरू किये कि यह आदमी दीन की उन्नति में बाधक है। वह समय भी कुछ और ही तरह का था, फौजदार ने उनके ऊपर निगाह रखने के लिए बहुत से सवार एवं प्यादे नियत कर दिये। नोचना खसोटना उनका काम था। सब इनसे तरह-तरह की प्रार्थना करने लगे। साधू के पास क्या धरा था। लाल दास जी किसी की बात का जवाब नहीं देते थे। आखिर जब उन लोगों की सख्ती हद को पार कर गयी यह अपने साधुओं को साथ लेकर बहादुर पुर की ओर चल दिये। उनके जाते ही वह जगह बीरान हो गयीं। फौजदार को आश्चर्य हुआ। उनसे मिलकर पूछा कि तुम्हारी जाति क्या है और किस दीन पर चलते हो ? आपने जबाव दिया:—

> हिन्दू तुर्क एक हम बूझें; साहब सब घट एक ही सूझें।
> बोलनहारा कौन बतायो, जामा एक मेन घर पायो।
> शब्द विवेक मोर छल हाथ, मूरख होय सो पूछे जात ॥

यह सुनकर फौजदार को क्रोध आया। कहने लगा। प्रति व्यक्ति पाँच रुपया जजिया कर दो तो हम तुम्हें छोड़ेंगे वरना गिरफ्तार कर लेंगे।

लाल दास जी का वचन :-

> कहै लाल साईं को प्यारो, या माया ने सब जग जारयो।
> हम तो दाम गाँठ नहीं बांधो: यह संसार फिरत है आंधो।
> उद्यम करें और खायें बाँटे, हाजिर हो तो कभी न मांढ़यें ॥

फौजदार के गुस्से का पारा एक दम ऊपर को चढ़ गया। इनके पास क्या था जो जबरदस्ती कोई छीन लेता। नौकरों को हुक्म दिया कि इन्हें जहरीले कुँए का पानी पिलाओ। ताकि यह योंही मर जायें और हमे इनके खून से अपना हाथ रंगीन न करना पड़े। लाल दास ने कहा हम आते ही

हाथ से पानी खींचकर पीयेंगे। उन्होंने ऐसा ही किया और कुछ अपना पीया हुआ पानी कूये में डाल दिया। जहरीला कुँआ मीठा हो गया अब तक उसका पानी मीठा है। और उसका नाम शक्कर कुँआ है, फौजदार को उम्मेद थी कि सबके सब पानी पीकर मर जायेंगे। मगर उनमें से कोई भी न मरा। पूरे चार पहर तमाम साधू वहाँ बैठे रहे और भजन व अस्तुति गाते रहे। फौजदार और उसके आदमी यह देख कर सुन्न हो गये और फिर उनका पीछा करना छोड दिया।

वहाँ से कूँचकर यह टोडी मे आये और यहाँ पर भी वही कैफियत रही चूँकि खास जमाअत साथ थी लुटेरो ने समझा, इनके पास बहुत माल व असबाब है। चोरी करने का इरादा किया और आधी रात के समय मकान में घुसकर बहुत कुछ ढूँढा और तलाश किया। हाथ आने वाला क्या था। आखिर हैरान और परेशान होकर इनसे माफी माँगी। उस समय के हाकिम लोग यहाँ भी तंग करते रहे और आखिर जब यहाँ भी शान्ति की कोई सूरत नहीं देखी तो गाँव - गाँव होकर पहाड़ों पर जा निकले। वहाँ कुछ आबादी थी। राजपूताने में पानी का कष्ट बहुत रहता है। गरमी का दिन था। जमाअत प्यास से परेशान हो गयी। यहाँ तक कि मारे प्यास के आगे को कदम बढ़ाना मुश्किल हो गया। निरुति में लोगों से उन्होने पानी माँगा तो शुद्रहृदय लोगों ने कहा कि तू अच्छा फ़कीर है अपना गाँव उजाड़ा और इधर-उधर मारा मारा फिरता है। यहाँ पानी कहां हैं। जा अपना काम देख ! पानी नहीं मिलेगा।

दुश्मनों का वचन :-

अब लो सुध कहां को जाई, अपना गांव तो चला लुटाई।
जो तोमें कुछ शक्ति होती, क्यों मरवाता भाई गोती॥

लाल दास जी का वचन :-

कहै लाल साई को प्यारो, पर इक याय जगत ते हारो।
लिखा लेख भुगते ही छूटै; सदा लुटे जो और को लूटे॥

लाल भगत समझो मन माहीं, तुम जो चाहो पानी नाहीं ॥

लालदास जी का वचन :-

हम तो पानी पीवें आगे तुम क्या पियो भाग अभागे ॥

यह तो आगे को चले। वहाँ किसी जगह पानी मिला। प्यास बुझाई मगर इनके जाते ही निरुली के कुओं का पानी सूख गया। और वहाँ के निवासी परेशान होकर भाग निकले। वह जगह अब तक वीरान पड़ी है। और जहाँ-तहाँ खँडहर ही खँडहर नजर आते हैं। जो एक भक्त के अपमान अपमान की सूचना की स्मृति के रूप में अब तक मौजूद है।

रास्ते में शेरखाँ और गौसखाँ दो मुसलमान मिले जो इनके साथ आदर सत्कार के साथ पेश आये। लाल दास जी ने उन्हें आशीर्वाद दिया कि तुम्हारा कल्याण होगा।

इस तरह घूमते फिरते एक बार अपने गाँव में आये। लोगों ने समझाया कि आप यहीं रहकर भजन भाव का सिलसिला जारी करें। परन्तु उन्होंने स्वीकार नहीं किया और बहुत से लोगों को चिताकर फिर उसी प्रकार घूम-फिर कर अपने विचारों को व्यक्त करते रहे।

तिजारे में एक सूबेदार या नाज़िम रहता था। उसका नाम साहब खां था लोगों ने उससे कहा कि लाल दास कौम का मेव और मुसलमान है। मगर हिन्दुओं के दीन पर चलता है।

दौडी खबर तिजारे गयी, साहब खान से जाकर कही।
जात मेवकी ओर मुसलमान, हिंदू राह चलायी आन ॥
देने बाग-नुमाज़ न पढ़े, ईद बकरहि को मन नहिं धरे।
रोजा रखे न कलमा कहे, हिन्दू तुर्क से न्यारा रहे ॥
नवी रसूल कहे न कहावे, राम राम मुख से नित गावे।
कैसे हिन्दू और मुसलमान, एक ही राह चलायी आन ॥

मुगल को यह खबर सुन कर आश्चर्य हुआ। उसने बहुत से आदमी नगले में भेजे जहाँ वह उस समय ठहरे हुए थे। लालदास जी का आतिथ्य सत्कार प्रसिद्ध था। सब का सत्कार किया। मुगलों ने कहा यह तुमने क्या

स्वाँग बनाया है। मुसलमानों का सच्चा दीन है। उसे क्यों छोड़ दिया। केवल एक नये ढंग के पीर बन बैठे हो। लाल दास जी ने जबाव दिया कि तुम्हारा ख्याल गलत हैं। हिन्दू और मुसलमान दो नहीं हैं। वह मालिक के प्यारे हैं। जाति और मजहब यह मनुष्य के आविष्कार हैं। वरना वह मालिक हिन्दू और मुसलमानों में एक-सा ही विराजमान है।

आपही पीर और आप अमीर, आप गृहस्थी आप फकीर।
कहीं गुणी हुये सींख सुनावे, कहीं मौनी हो चुप्प रहावे।
कहीं कमल होय सोभा दे, कहीं भौंरा हो बाँसा ले।
सब घट रहे सकल सों न्यारा, जानेगा कोई जाननिहारा।
हमरे तो रामु नाम की बात, इतनी कह उठ लाये साथ॥

मुगलों ने साहब खान की ओर से दावत दी और उनको कहा कि आप तिजारे चलें सूबेदार ने बुलाया है। उन्होंने स्वीकार कर लिया और अपनी जमाअत वालों से बोले :-

कहें लाल सुनन सुखदायी, साध-सन्त सब लिए बुलायी।
घर ही बैठे हरि गुन गाओ, काँची बात हृदय मत लाओ।
सनमुख रहियो सेवा करियो, राम नाम हृदय में धरियो॥

और तो सब गुरु का हुकम सुनकर सलाम करने के बाद विदा हुए परन्तु बारह शिष्यों ने उनका साथ छोडने से इनकार कर दिया।

करी सलाम और उलटे सारे, बारह साध टरें नहि टारे।
हम दरशन बिन कैसे जीयें, दरशन बिन अन्न पानी न पीयें।
सतगुरु ऐसी राह बनायी, गुरु के चरन रहें चित लायी।
प्रीति जब उनकी देखी, चले संग ले लाल विवेकी॥

दावत देने वालों के दिल में यह भावना थी कि या तो लाल दास मुसलमानों के मुजहब में रहें या फिर इनका यह काम ही समाप्त कर दिया जाये। क्या मालूम बारह शिष्यों ने इसी कारण साथ नहीं छोड़ा था। मुसल-

घोड़ा पेश किया। इरादा तो पैदल ही चलने का था परन्तु उन लोगों के आग्रह पर जिस समय लाल दास जी घोड़े की ओर एक नजर डाली और पीठ पर हाथ फेरा, वह पानी २ हो गया। और सब अपनी बदमाशी भूल गया ।

जभी पाँव घोड़े पर धरयो, तबहीं गरदन नीचे करयो ।
जब ही पींठ पर बैठे लाल, गाजी मरद भया सुखहाल ॥

लोगों को देखकर आश्चर्य हुआ। वह क्या था क्या हो गया। इस तरह सवार होकर राह में दो एक जगह अपनी आदत वश उछल कूद दिखाते हुये तिजार पहुंचे ।

साहब खाँ ने अपने आदमियों से सब कुछ सुना। उनके लिए खाने का सामान तैयार कराया। गोश्त और कबाब जो मुसलमानों की प्यारी चीज़ है, वह प्रस्तुत की ।

ताज़िम मुगल ने स्वागत करी, बैठो पीर दया तुम करी ।
रोटी खाना करो कबाब, भूखा खावे बड़ा सबाब ।
अन्न अहार तो बड़ा अजीज, ऊपर मुसलमान की चीज ।
मुसलमान होय खाय खिलावे, तो वह राह खुदा की पावे ।
रोटी धरी पीर के हाथ, मानो पीर हमारी बात ।

लाल दास जी उसके दिल की बात जान गये और बोले—

कहै लाल साईं को प्यारो, साहब एक बनावन हारो ।
हिन्दू तुर्क को एक ही साहब, राह बनायी होय अजायब ।
दूजा होय दुविधा मत करे, जीव को मारे मुर्दा करे ।
जो कोइ पिय घाले घात, गला कटावे अपने हाथ ।
वह तो उलटा बदला लेय, साईं रिसाय दोजख में देय ।
ऐसा कोई हमें बतावे, साईं की दरगाह छुड़ावे ।
साईं आप अदालत करे, वा दिन से कोई साधू डरे ।
सब घट में साईं परवेश, हम तो दयावन्त दरवेश ।

लाल दास जी ने इस दावत को सिद्धान्त के प्रतिकूल समझा और देखो सब सामान चावल की शकल में बदल गया।

इतनी बात मुगल सों भयी, रोटी लाय हाथ पै लयी।
पाक नजर देखे लाल दास, रोटी भई चावल सुखदास॥

मुगल अचम्भे में हो गया। उसने उसने सोचा, इस फकीर ने दीन दीन इसलाम में बडा भारी झगड़ा पैदा कर दिया। इसलिए उन्हें कैद करना चाहा और तरह-तरह के कष्ट देना चाहा। मगर उसके साथियों पर कुछ ऐसा असर हुआ कि वह उनको सताने में कुछ पेशो पेश करने लगे और वह मौके के साथ वहाँ से चलने को तैयार होने लगे।

प्रेत व्याधा को दूर करना।

मुगल की एक लड़की पर कोई प्रेत आता था। बहुत कुछ उपाय किये गये परन्तु वह रोग मुक्त नहीं हुई। उसने लाल दास जी को एक कामिल फकीर समझ कर इस ओर ध्यान देने के लिये प्रार्थना की और वह उनकी दुआ से अच्छी हो गयी। मुगल ने शर्मिदा होकर कहा।

लाल दास तुम सच्चे पीर। अब बख्शो मेरी तकसीर॥

लाल दास जी का बचन

कहे लाल तू सुन रे भाई साध सतावे दोजख जाई।

कहते हैं लाल दास जी तिजारे में 40 दिन तक रहे। बाद में मालिक की ओर से प्रेरणा हुयी कि अब और जगह चलकर जीवों को चिताना चाहिये। बस वह वहाँ से चल दिये।

धर्म प्रचार आदि —

भोजपुर नामी कसबे में कोई साधू रहता था जिसका नाम मनसुख था। यों तो वह अच्छा आदमी था मगर दिल का इतना साफ नहीं था। वह लालदास जी से मिला। लालदास जी ने ताड़ना देकर उसको अपने चरणों में लगाया। और उसके दिल से मान बड़ाई का खयाल दूर किया।

मान बड़ाई छोड़ दे, यही साध की रीति।
गुरु मारग तब पाइये, जब मन में परतीति॥

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

जब लाल दास जी के परमारथ की चर्चा दूर-दूर तक फैल गयी। तब आगरे के एक सौदागर ने अपने जहाज को सङ्कट में पाकर मिन्नत मानी कि अगर वह सकुशल अपने माल वह असवाव सहित घर पहुंच जाये तो लाभ का दशमांश लाल दास जी को भेंट करेगा। उसकी प्रार्थना स्वीकार की और उनकी दुआ मंजूर हुई। वह बहुत कुछ रुपया पैसा लेकर उनकी सेवा में उपस्थित हुआ, लाल दास जी ने उससे कहा -

कहें लाल हम आप बियोगी, न हम मलंग सन्यासी जोगी।
जो कोई मांगे ताको दें, एक साईं से सौदा लें॥

और रुपया कों हाथ लगाने से इनकार कर दिया। उसने प्रार्थना की, अब मैं यह दौलत घर नहीं ले जा सकता। आप जो आज्ञा दें वही करूँ।

लाल दास जी का वचन —

कहें लाल तू सुनरे शाह, कर दे द्रव्य पुन्य की राह।
द्रव्य तू घर ले जायी, साध व बैष्णव दे भुगतायी।
साध सन्त की सेवा करियो,हरि विश्वास हृदय में धरियो

आगरा में एक करोड़पति रहता था जिसका नाम महानन्द था। उसके शरीर पर कोढ़ के भद्दे २ दाग थे जो किसी तरह अच्छे नहीं होते थे। उसने परेशान होकर आत्म हत्या का इरादा किया। स्त्री उसकी चतुर थी। उसने सलाह दी कि लाल दास जी की शरण में जाओ। क्या आश्चर्य, इस रोग से छुट्टी ही मिल जावे। वह साधू के पास आया। वह बोले—

अरब खरब सब देय लुटायी, तेरो रोग दुक्ख सब जायी।

महानन्द ने स्वीकार कर लिया।

महानन्द को बात सुहायी, अरब खरब सब दियो लुटायी।

इसके सिवाय उसे और भी कुछ कहा —

दूजी कला और भी खेलो; लोक लाज सब दूर बिगेलो।
काला मुँह कर जग दिखलाओ, नया साज हथियार बँधाओ।
देखत जगत अचम्भा आवे, साधू कहे करे सो पाये।

जाय त्रिबेणी बेगि नहाबे; साधु संग मिल मङ्गल गावे ॥

काला मुँह करके दिखलाना लाल दास जी के पंथ में प्रारम्भिक दीक्षा का तरीका है। इसकी गरज केवल अहंकार को चूर करना है और कुछ नहीं। जब वे चेला बनाते हैं उसका मुंह काला करके गधे पर चढ़ा कर मुँह दुम की तरफ करके इधर-उधर घुमा फिरा देते हैं और गले में जूतों का हार पहना देते हैं। ताकि दिलमान बडाई का खयाल न रहे। पता नहीं उस समय इस रसमी कायदे की कहाँ तक पाबन्दी की जाती थी। कोई २ आदमी चेला बनने पर अपना घर भी लुटवा देते थे।

महानन्द ने इन सब बातों को किया। उसकी औरत ने कहीं दो कीमती मोती रख लिए थे। उनको भी पुन्य कर दिया। कहते हैं उसका रोग दूर हो गया और वह आराम से रह कर परमारथ की कमाई करने लगा। लगभग शरीर के सारे रोग मन की अपवित्रता से होते हैं। मन यदि स्वच्छ एवं पवित्र बना लिया जाय तो फिर शारीरिक रोगों से भी मुक्ति मिले जावे।

इसी प्रकार और बहुत से आदमियों को सन्मार्ग पर लगाया। जिनमें से धनस्वरुप, चित्रदास भिकखन, लून, बुरली, चरनदास आदि साधू महात्माओं का नाम इस ग्रन्थ की किताबों में आता है। चरन दास मथुरा का साधू था। जिसके साथ 700 चेला रहते थे।

उनकी उम्र 108 वर्ष की थी। 40 वर्ष तक तो नगले में रहकर सत-संग कराते रहे। 68 वर्ष तक गुप्त रीति से घूम फिर कर उपदेश दिया। और सम्वत 1665 में चोला छोड़ दिया।

इनके बचन किताब के रूप में कम नजर आते हैं। शब्दों को साधुओं ने याद कर रखा है। वही गा गाकर सुनाते रहते हैं। इनकी बानी बहुधा कबीर साहब की बानी से मिलती जुलती हैं। लाल दास जी के पन्थ के अनुयायी अधिकतर अलवर में पाये जाते है। इस मत के अविलम्बियों की यह विशेषता है कि मेहनत व मजदूरी करके खाते हैं और जो कुछ बच जाता है उसे इकट्ठा संग्रह नहीं करते वरन् औरों को बाँट देते हैं। भीख मांगना

रामानुजाचार्य्य

तत्वदर्शी से

रामानुज जी वेदान्त के दूसरे आचार्य्य हैं। यह शंकराचार्य जी के पश्चात् और माधव से पहले हुए हैं। इनका पक्ष वशिष्टाद्वैत है। यह भी बड़े योग्य और महान् पुरुष थे। रामानुज के वृत्तान्त दक्षिण भारत के बच्चा २ के मुख पर हैं। भार्गो उप पौराण ग्रन्थ में उनके बहुत से चमत्कार अंकित हैं। और उनको श्री शेषजी का अवतार बताया गया है। विदित्य चरित्र नामक पुस्तक में लिखा है कि वह श्री केशवा चार्य्य जी के पुत्र थे। उनकी माता का नाम कान्तीमती था उनकी उत्पत्ति शालि वाहन सम्वत् ११०० में हुई थी, और सम्वत् ११२७ में यादप्रकाश पण्डित के पास विद्या पढ़ने गये थे, कुछ काल तक उसके पास रह कर वेद शास्त्र और पौराणादि सब कुछ पढ़ लिया। उस समय स्वामी शंकराचार्य जी के मत का जोर था, सब अद्वैतवाद के प्रेमक बन रहे थे, विष्णु स्वामी केसम्प्रदा में जिसका प्रारम्भ अष्ट कूप से हुआ था कुछ २ जान बाकी थी। रामानुज को उनके नियम अच्छे लगे। वह उनमें सम्मिलित हुए और उनका दृढ़ निश्चय करने के लिए श्री पबनौ मोतोर नामक ग्राम में एक इमली के वृक्ष के नीचे बैठ कर ईश्वर उपासना करने लगे। इसके पीछे अपने मत के प्रचार का भाव जाग्रत हुआ। और वेद तथा उपनिषदादि का सहारा लेकर ईश्वर भक्ति की शिक्षा देने लगे। अनुमान से ज्ञात होता है कि रामानुज से पहले विष्णु स्वामी के मत का कुछ जोर नहीं था। रामानुज ने उस में सम्मलित होकर उसकी बड़ी उन्नति की। और वशिष्टाद्वैतवाद की नीव डाली। और अपने मत का नाम श्री सम्प्रदाय रक्खा। इस मत के अनुयाई न्यायदर्शन को मुख्य मानते हैं। रामानुज जी शंकर स्वामी के मत का खण्डन करने लगे। अद्वैत वाद की तुलना में वशिष्टाद्वैत का समझना सुगम है। इसके सिवाय अद्वैत मत वालों में ब्रह्म में अज्ञान का होना एक ऐसा विषय आगया है जिसको न समझने वाला समझा सकता है और न समझने वाला समझ सकता है। रामानुज ने बड़ी चतुरता से इस कठिनता का लाभ उठाया और शंकर स्वामी के बहुत

से शिष्यों को अपने मत में मिला लिया। परन्तु सब लोग इनकी ओर आकृष्ट नहीं हुए ॥

दैव योग से उसी समय श्रीरंग में वैष्णवत था शवों के बींच बड़ा विरोध हो पड़ा यहां तक कि लड़ाई की नौबत पहुंची। करीकाल चोला नामक वहाँ का राजा था वह शैव था। उसने अपने देश के सब ब्राह्मणों को इस बात पर उद्यत किया कि वह शिवजी को सब देवताओं से बड़ा कहें। केवल रामानुज उसके विरुद्ध रहे और अपने शिष्यों समेत वहां से चल दिये। मालाबार होते हुए माईसूर पहुंचे। यहाँ एक जैनी राजा बिटलदेव लालराय राज करता था उसकी पुत्री बहुत रोगिणी रहा करती थी। रामानुज जी की चिकित्सा से वह अरोग्य हो गई। वह रामानुज जी का बड़ा विश्वासी हो गया और जैन मत छोड़ कर वैष्णव हो गया। तब उसका नाम विश्ववर्धन रक्खा गया। रामानुज जी कई साल मैसूर में रहे। और वहाँ के निवासियों को वैष्णव मत का उपदेश करते रहे। वहाँ ही एक बड़ा भारी मन्दिर बनवाया। उसमें कृष्ण की मूर्ति स्थापित की यह मन्दिर यादव गिरी पर है। और मैल कोटे के नाम से प्रसिद्ध है। इस मन्दिर में रामानुज जी बारह वर्ष तक रहे। जब, इनका शत्रु चोला राजा मर गया तो यह श्री रंग को लौट आए और रावी नदी के किनारे शेष आयु ईश्वर की उपासना में समाप्त की ॥

रामानुज के जीते जी शिष्यों की संख्या बहुत बढ़ गई थी। इनके चार मठ हैं, एक तावरे में है इसका नाम तिगल है, दूसरा गलना नामक ग्राम में है उसका नाम अतिगल है। तीसरा होवाली में है जिसका नाम पड़गल है, चौथा रिवाजा में है पड़गल और अतिगल के महत्तों में परस्पर कुछ विरोध है। और अब तक वह दूर नहीं हुआ ॥

सिद्धान्त—रामानुज सम्प्रदाय के विशेष सिद्धान्त यह है। ब्रह्म अद्वैत अवश्य है परन्तु कैवल्य नहीं है। वशिष्ट है जड और जीव यह दोनों उसके भेद हैं। इनमे जो व्यापक और जड़ चेतन दोनों में व्याप्त है, वही ब्रह्म है। हरि, चित्त, अचित्त, यह तीन रूप विश्व मात्र है। और ब्रह्ममय है इस विचार से ब्रह्म एक है। परन्तु जब इस के तीन अङ्गों पर निगाह की जाती

है तो वह सदैव पृथक है। अद्वैतवाद में ब्रह्मज्ञान रूप बताया गया है। और यह जगत् मात्र माया रूप ठहराया गया है। माया अज्ञान से भासती है। परन्तु यह समझ में नहीं आता कि जब ब्रह्म ज्ञान रूप है तो उसमें अज्ञान कहां से आ गया। यह विरोध मिट जाता है यदि वशिष्ट रूप से ब्रह्म को देखा जाय। परमेश्वर पुरुष है, गुण वाला है। परन्तु मुक्त है। जीव भी गुण वाला है परन्तु यह मुक्त नहीं है और जब मुक्त हो जाता है तो ईश्वर के तुल्य हो जाता है। भेद केवल इतना रहता है कि वह जगत् को उत्पन्न नहीं कर सकता है। मुक्ति चार प्रकार की मानी गई है। सात्विक साम्यप आदि। ईश्वर अवतार धारण करता है इन में राम कृष्णादि हैं। राम का अवतार उन में मुख्य है। यह केवल राम के उपासक होते हैं। परन्तु कृष्ण के विरोधी भी नहीं है। इनके यहाँ पाँच प्रकार से ईश्वर भी उपासना भी मानी है अभिमग्न, उपादान, ईज्या, स्वाध्याय और योग। देव स्थान में स्नान मार्जन कराना, मूर्ति को नहलाना धुलाना अभिमग्न है। गन्ध पुष्पादि पूजा की सामग्री लाना उपादान है। पूजा करना ईज्या है। मंत्र का जाप पुस्तकों का पाठ करना स्वाध्याय है। अन्तर्यामी का ध्यान लगाना योग है। ओइम् रामायनमः ओइम् श्रीमतेरामानुजायनमः। इस मत के परम मंत्र समझे जाते हैं। यह मत के विशेष सिद्धान्त हैं॥

असली मत इनका ईश्वर भक्ति है। परमात्मा का नाम नारायण बताते हैं और लक्ष्मी को उसकी स्त्री ठहराते हैं। राम कृष्ण आदि की मूर्ति मन्दिरों में रख पूजते हैं। इस मत के साधू जब परस्पर मिलते हैं तो दासोसम्यहं' कह कर नमस्कार करते हैं। बाकी लोग साष्टांग दण्डवत् करते है। माथे पर तिलक लगाना आवश्यक है। तिलक गोपी चन्दन मिट्टी का होता है। बीच में रोरी होता है। बाजुओं पर शङ्ख चक्र, गदा, पद्म का चिन्ह बनाते हैं। यह चिन्ह तप्त लोह के द्वारा भी बनाते है। गले में तुलसी वा कमल की माला पहनते हैं। इस मत के आचारी खान पान में बड़ी शुद्धता रखते हैं। परदे में बैठकर खाते हैं और अपने हाथ में बनाते हैं॥

सम्प्रदा— इस मत का नाम जैसा पहले बताया गया विष्णु स्वामी सम्प्रदा है। रामानुज स्वामी ने इसको श्री सम्प्रदाय की उपाधि दी थी। इस

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY PURNADAYAL

से बहुत से सम्प्रदाय निकले। आनन्द सम्प्रदाय भी इसी की शाखा है। वल्लभाचार्य्य का मत भी इसी से निकला है। रामनुज के कई पीढ़ी पश्चात् बनारस में एक साधू रामानन्द जी हुए हैं उस मत में लाखों की संख्या में साधू सम्मिलित हुए और अब भी उत्तरी भारत में इस मत के वैरागी साधू बहुत पाये जाते हैं। रामानन्द के शिष्यों ने भी बहुत से अलग२ पन्थ चलाए। श्री कबीर साहब जी इन्हीं के शिष्य थे। सम्वत् १८८० शाके में रामानुज मत का एक साधू चरनदास कहलाता था वह राजपूताना में आकर ठहरा और बहुत से राजपूतों को अपना शिष्य बनाया ॥

धार्मिक ग्रन्थ—इस मत की धार्मिक पस्तकें बहुत है। रामानुजाचार्य्य बहुत बड़े पण्डित थे। इन्होंने व्यास सूत्र भाषा लिखी थी। दूसरी पुस्तकें यह है गीता भाषा, न्यायामृत भाषा वेदन्त प्रदीप, तर्क भाषा, वेदार्थ संग्रह, वेदान्त तत्तसार, श्रोत भाषा, शतरोषणी, नारद पंचरात्रि, त्रष्टध्यान, चित्रमारुती, । विष्णु पूजा, विष्णु प्रबोधन, रंगराव, स्तोच, विष्णु सहस्त्र नाम, आदि २ रामानुज के शिष्य अद्वैत भाषा को माननीय ग्रन्थ समझते हैं और धर्मसन्था नामक पुस्तक का भी बड़ा सम्मान करते हैं। उनको सम्पति में तह सात्विक है बाकी तामासिक है। रामायण को भी प्रेम से पढ़ते है। और उत्तरी भारत के वैष्णव श्री सम्प्रदा वाले गोस्वामी तुलसीदास जी की रामायण का पाठ किया करते हैं ॥

रामानुजाचार्य्य बड़े महान् पुरुष हुए हैं। उनको आज ७८० वर्ष इस संसार से पधारे हुए हो गए। परन्तु अब तक उनका नाम सब के कण्ठस्थ है। और सब उन के नाम का आदर करते हैं ॥

नोट :—जिन भाइयों ने अपना वार्षिक शुल्क नहीं भेजा है वह शीघ्र भेजने की कृपा करे

सम्पादक

श्री पद्मपादाचार्य्य

धर्म पन्थ में जब तक गुरु शिष्य का वर्ताव नहीं वर्ता जाता तब तक उन्नति होनी असम्भव है। संसार में केवल पुस्तकों के पढ़ लेने से किसी को आज तक उच्च पद प्राप्त नहीं हुआ, यदि पुस्तकों में यह शक्ति होती तो आज सारा संसार महा पुरुषों से भर जाता। परन्तु सत्य यह है कि आज तक ऐसा एक आदमी दिखाई नहीं देता जो केवल पुस्तकों के द्वारा सिद्ध पद को पहुँचा हो। परन्तु जब कभी असली गुरु का संसार में अविर्भाव हुआ है तो एक दो नहीं, वरन् हजारों मनुष्य सिद्ध पद को पहुँच गये हैं। बुझे हुए दीपक से दूसरे दीपक नहीं जलाए जाते वरन् जलते हुए दीपक से दूसरे दीपक वाले जाते हैं। गुरु और शिष्य बनना सहज काम नहीं है। यह बहुत टेढ़ी खीर है। इसमें बहुत हीं मन को दमन करना पड़ता है। श्री कबीर साहब जी कहते हैं॥

दोहा—कबीर ऐसा कोई ना मिला, शब्द गुरु का मीत।
तन मन सौंपे मृगा ज्यों, सुने वधिक का गीत॥

भावार्थ—हे कबीर ऐसा कोई मनुष्य नहीं मिला जो शब्द गुरु का मीत बनता, और हिरन की तरह अपने तन मन को सौंप कर वधिक के गीत को सुनता।

दोहा—सेवक सेवा में रहे, सेवक कहिये मोय
कहें कबीर सेवा बिना, सेवक कभी न कोय॥

भावार्थ—जो सेवा करता है वही सेवक है, सेवक का धर्म है कि सेवा में रहे। श्री कबीर साहब जी कहते हैं कि बिना सेवा के कभी कोई सेवक नहीं होता॥

दोहा—सेवक सेवा में रहे, अन्त कहूं नहिं जाय।
दुःख सुख शिर ऊपर सहै, कहें कबीर समुझाय॥

भावार्थ—सेवक सदा सेवा में लगा रहे, दूसरी जगह न चला जाय, अपने ऊपर दुःख और सुख को सहे, कबीर साहब जी इस प्रकार समझाकर कहते हैं

दोहा—सेवक स्वामी एक मत जो मत में मिल जाय ।
चतराई रीझें नहीं, रीझै मन के भाय ॥

भावार्थ—सेवक और स्वामी यदि मत में मिल जाँय तो एक मत के हो जाते हैं । चतुराई से गुरु नहीं रीझते वरञ्च मन के भाव को देख कर रीझते हैं ॥

गुरु और शिष्य का आत्मिक सम्बन्ध इस प्रकार का है जिस को भली भान्ति समझ लेना चाहिए । जिस के हृदय में दृढ़ विश्वास होता है वही मनुष्य गुरु के रूप में लय हो सकता है । बाकी सब वंचित रहते हैं । चेला इस प्रकार का हो कि उसमें आपा नाम को भी न हो । गुरु का रंग शिर से पाँव तक चढ़ जाय। तब वह शिष्य है नहीं तो उसको शिष्य कहना व्यर्थ है ॥

दोहा—कबीर निबन्धन बन्ध रहा, बन्ध निर्बन्धन होय ।
कर्म करे करता नहीं, दास कहावे सोय ॥

भावार्थ – स्वतंत्रतामें बन्धा हुआ सम्बन्ध की जंजीर से जकड़ा हुआ भी स्वाधीनता से काम करता हैं परन्तु कर्ता फिर भी नहीं हैं । ऐसे मनुष्य को दास कहते हैं ॥

यह शान्ति और तुष्टि का पद है और यह केवल सच्चे सेवक को मिलता है ॥

जहां कहीं धार्मिक शिक्षा होगी वहाँ इसी प्रकार के पवित्र भाव होगें ॥

एक सूफी का कथन है कि "गुरु को धारण करो बिना गुरु के इस मार्ग में हजारों विघ्न हैं । यदि सफर करना है तो इसी झण्डे के तले चल, यदि पूर्ण ज्ञानी है तो भी अभिमान न कर, तुरन्त गुरु का सहारा प्राप्त कर उनके आश्रय से बेड़ा पार होगा, सिवाय गुरु की कृपा और किसी प्रकार से यह चंचल मन काबू में नहीं आता है । जब ईश्वर की कृपा दृष्टि होगी तभी सच्चे गुरु प्राप्त होंगे । और जो कुछ शक्ति तुझ में आवेगी उन्हीं की कृपा से आवेगी ॥

जब चेला इस प्रकार अपने आप को अर्पण कर देता है तो अपने आप उसमें तेज और ऐश्वर्य चमकने लगता है ॥

संसार में बहुत से चेले हुए हैं क्यों कि बिना चेला होने के कोई मनुष्य सिद्धि को नहीं पहुँचा। आज हम एक चेले का वृत्तान्त आप को सुनाते है ।।

इस शिष्य का नाम धार्मिक इतिहास पद्माचार्य है। यह श्री स्वामी शंकराचार्य महाराज के शिष्य थे । जो पदवी कबीर साहब के शिष्यों में धर्मदास की थी। जो पद बुधदेव के शिष्यों में आनन्द का था, वही पद श्री शंकराचार्य जी के शिष्यों में पद्माचार्य जी का था। यह महात्मा विमल नामक ब्राह्मण के पुत्र थे, इनका घर कावेरी नदी के तट पर चोला देश में था, बाल्य काल में ही इन्होंने वेद वेदाङ्ग सब कुछ पढ़ लिया था। परन्तु शान्ति नहीं हुई। इसी लिये जंगल में विचरते थे ।।

दोहा—पिय बिन जिय तरसत रहे, पन्त पल विरह सताय।
रैन दिवस मोहे कल नहीं, सिसिक-सिसिक जियजाय ।।

भावार्थ—प्रींतम के बिना हृदय तरस रहा है त्रण २ विरह सताता है। रात दिन मुझको चैन नहीं आता सिसिक २ कर प्राण निकले जाते हैं ।।

यह ब्राह्मण पुत्र जिनको जन्म काल से प्रेम और भक्ति प्राप्त हुई थी, इसी प्रकार व्याकुल फिरते थे। निदान इन की शान्ति का समय आगया ।।

दोहा—विरह जलन्ती देख कर, सांइ आए धाय।
प्रेम बूंद को छिड़क कर, जलती लई बुझाय ।।

भावार्थ विरह की अग्नि में मुझको जलती हुई देख कर साई आप दौड़ कर आगए। और प्रेम की बूंदों को छिड़क कर जलती हुई अग्नि को बुझा दिया ।।

इसी प्रकार विचरते हुए इन्हें स्वामीं शंकराचार्य जी के दर्शन हो गए। इन्होंने हाथ जोड़ कहा "स्वामिन्! इस संसार सागर में डूब रहा हूँ मुझको अपनी अपार दया से पार कीजिए। मेरे गुण दोष को न देखिये। कृपा कर मेरे उद्धार का मार्ग निकालिए। शंकर स्वामी ने इनको अधिकारी देख कर सन्यास की शिक्षा दी। और अपना शिष्य बन या। इन में गुरु भक्ति परले

दर्जे की थी । गुरू की सेवा बड़े प्रेम से करते थे ॥

इनकी भक्ति देख कर श्री शंकर स्वामी ने इनकी परीक्षा करनी चाही । एक दिन शंकराचार्य जी गङ्गा के किनारे पर खड़े थे । गंगा बहुत-वेग से बह रही थी । शंकर स्वामी ने शिष्यों को हाँक दी कि धोती दे जाव, परन्तु सब के सब डर गये । किसीं में साहस नहीं था कि गंगा पार जासके अन्त में उन्होंने इनको आवाज दी । इन्होंने तुरन्त धोती को शिर पर रख लिया और उच्च स्वर के साथ कहा "जिस गुरु की शिक्षा से भवसागर पार करना है क्या उसकी आज्ञा से मैं गंगा पार नहीं जा सकता ? अवश्य जा सकता हूँ" । यह कह कर गंगामें कूद पडे, कहते हैं कि गंगा ने उनके पांव के नीचे थोड़े २ फाँसले पर कमल उत्पन्न कर दिये । जिन पर वह पाँव धरते हुए उप पार चले गए और गुरु की धोती पहुँचा दीं । यह कथा सत्य हो, वा मिथ्या हमें इस से कोई वास्ता नहीं, परन्तु सत्य यह है कि जिस गुरु के वचन में पूरी श्रद्धा हो वह क्या नहीं दिखाता । गुरू के वचन की श्रद्धा असम्भव को सम्भव कर दिखाती है ॥

दोहा - गुरू मिले तब जानिये, मिटै मोह तन ताप ।
हर्ष शोक व्यापे नहीं, तब गुरू आपे आप ॥
गुरू समरथ शिर पर खड़े, काह कमी तोहि दास ।
ऋद्धि सिद्धि सेवा करे, मुक्ति न छाँड़े पास ॥
दास दुखी तो मैं दुखी, आदि अन्त तिहुकाल ।
पलक एक में प्रगट हे, क्षण में करूं निहाल ॥

गुरू मांस और हड्डी को नहीं कहते । न यह शरीर गुरू है । गुरू आत्मिक पद का नाम है । इस का असली मतलब केवल वह समझ सकते हैं । जिन्होंने कुछ पहुँचे प्राप्त करली है । जो गुरू को इस प्रकार समझ कर मानता है उसके लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं है ॥ सब कुछ उसके हाथ में है । ऐसा सेवक जब गुरू के सन्मुख होता है तो उसी क्षण उस का काम बन जाता है । और गुरू के वचन रूपी तार जब उसके कलेजे को छेद देते हैं तो उसका आवागमन मिट जाता है ॥

दोहा —सतगुरू साँचा शूरमा, नख शिख मारा पूर।
बाहर घाव न दीखई, अन्तर चकनाचूर ॥

सनन्दन ने आकर गुरू के चरणों में पर शिर झुका दिया। और धोती भेंट की। शंकर ने अपने धर्म पुत्र के शिर पर हाथ फेरा, धन्य हैं वह लोग जिनके शिर पर एक बार भी गुरू का कर कमल फिर गया है॥

दोहा— वह दिन कैसा होगया. गुरू गहेंगे वांह।
अपना कर बैठा वहीं, चरण कमल की छांह ॥

इस दिन से शंकर ने प्रसन्न होकर इनका नाम पद्मपाद रख दिया। और फिर सारी आयु इसी नाम से पुकारे जाते रहे॥

स्वामी शंकर चार्य जी दिगविजय के लिए बाहर निकले परमात्मा ने उनको इसी काम के लिए तैयार करके भेजा था। क्योंकि जब २ धर्म की हानि की होती हैं तब २ महापुरुषों का अविर्भाव हुआ करता है। इस दिग-विजय में पद्मपाद सदैव गुरू के साथ रहे॥

श्री शंकराचार्य जी प्राय: मतों का खण्डन किया करते थे, और कपालिक मत का तो सपर्था मूलच्छेद कर दिया था एक कपालिक को शंकर स्वामी की युक्ति सुन कर आश्चर्य हुआ। उसने निश्चय किया कि यह कोई महा अवतार हैं यदि इनका सिर हाथ आजावे तो उसके द्वारा मैं सिद्ह हो सकता हूं। कदाचित य कपालियों का सिद्धान्त भी होगा। उसने कपट रूप से शंकर स्वामी की शिक्षता स्वीकार करली। और अवसर की ताक में लगा रहा। एक दिन जब शंकर स्वामी समाधि की दशा में थे और अपने तन बदन की सुरत नहीं थी तो वह कपालिक शस्त्र लेकर उनको मारने को झपटा। निकट था कि वह अपनी दुष्टता पूरी करे कि इतने में पद्मपाद जी जो गुरु सेवा में सदा तत्पर रहते थे आ पहुँचे और कपालिक को टांगों से पकड़ कर इस जोर से घुमाया कि वह मूर्च्छित हो गया फिर तलवार से उसका शिर काट कर फेंक दिया और गुरू की जान बचा ली॥

पद्मपाद जी संस्कृत के बड़े पण्डित हुए हैं। उन्होंने गुरू की आज्ञा से सूत्र भाषा पर दो टीकाए लिखी हैं। और उनकी व्याख्या में जो तीसरा ग्रन्थ रचा, उसका नाम विजय डिमडिम है। यह पुस्तकें उन्होंने गुरू के

अर्पण की थी ॥

शंकराचार्य के साथ वर्षों तक रहने के पश्चात् इन को देश देशान्तरों में भ्रमण करने की आज्ञा दी गई। इन्होंने भी अपने योग्य गुरू की तरह देश २ में अद्वैतवाद का प्रचार किया। फिर वामेश्वर में अपने मामा के घर आए, यहां और ही माया रची हुई थी। इनके मामा ने पहले लिखी हुई टीका को द्वैत वाद के अनुकूल बना रक्खा था। पद्मपाद जी व्याकुल हुए तब श्री शकर-स्वामी जी ने उसका सुधार किया ॥

कपालिक की तरह अभिनवगुप्त भी श्री शंकर स्वामी जी का महा वैरी हो गया था। क्योंकि उन्होंने उसके मत की भी धज्जियां उड़ाई थीं वह कपट भाव से इनका शिष्य बन गया और चिरकाल तक इनके साथ रहा, और ऐसा विश्वास बढ़ा लिया कि किसी के मन में उस की ओर से सन्देह न रहा। उस ने घात पाकर अनेक बार उनके भोजन में विषाक्त वस्तुएं मिला दीं जिसमें उनको भगन्दर का रोग हो गया परन्तु पद्माचार्य ने नितान्त परिश्रम से गुरू का इलाज किया और वह उस रोग के कष्ट से बच गए। स्वामी रामानुज के मत में खान पान के विषय में जो इतनी चौकसी की जाती है उसका एक कारण यह भी है कि लोग प्राय: आचार्यों को विष दे दिया करते थे ॥

श्री शंकर स्वामी पद्मपाद जी की भक्ति में इतने प्रसन्न थे कि अपने जीते जी काश्मीर के शारदा नामक मठ का उन्हें महन्त नियत कर दिया था। और स्वयं अपने हाथों से गद्दी पर बैठाया था शंकराचार्य जी पद्मपादजी को अपना दाहना हाथ कहा करते थे। इसी प्रकार जगन्नाथ पुरी में गोवर्द्धन नामक मठ स्थापन करके उसका आचार्य भी पद्मपादजी को बनाया। इस महा पुरुष ने मरते समय तक अपने गुरू का उद्देश्य पूरा किया। और अपने पीछे संसार में अमर कीर्ति छोड़ गया। धन्य है वह जो धर्म का जीवन व्यतीत करते हैं ॥

सत्संग परमसन्त हजूर मानव दयाल डा. ईश्वरचन्द्र शर्मा जी महाराज
मानवता मन्दिर
होशियारपुर
20-2-83

गुरु नाम मिला मुझको प्यारा, राधास्वामी, राधास्वामी।
सब नामों से है यह न्यारा, राधास्वामी, राधास्वामी॥
दल सहस कमल सुमिरन साधा, त्रिकुटी चढ़ ध्यान को आराधा।
सुन्न महासुन्न दुचिता जारा, राधास्वामी, राधास्वामी॥
सुरत शब्द जोग मत अति है सुगम, को अधिकारी पाता है मम।
गुरु ने मुझको दिया मरम सारा, राधास्वामी, राधास्वामी॥
जगमग जगमग ज्योति दमकीं, ज्योति विचित्र घट में चमकी।
हुआ मगन जो देखा चमकारा, राधास्वामी राधास्वामी॥
दल सहस कमल घंटा बाजा, और शून्य में रारंग धुन गाजा।
त्रिकुटी में मस गरजा ऊँकारा, राधास्वामी, राधास्वामी॥
ब्रह्माण्ड की थी वह त्रिलोकी, यह त्रिलोकी मैंने छोड़ी।
चौथे पद सुरत को गारा, राधास्वामी, राधास्वामी॥
चौथे पद नाम की धुन पाई, प्यारी धुन यह मुझको भाई।
सुनी उसे भंवर पद से पारा, राधास्वामी, राधास्वामी॥
सत्तलोक में बीन की गति प्रकटी, निरखी वहाँ सतगुरु की भृकुटी।
सतगुरु मेरे हो गये रखवारा, राधास्वामी, राधास्वामी॥
लख उलख की शोभा बहु न्यारी, गम अगम की महिमा थी प्यारी।
ऊँचे चढ़ हो गया भव पारा, राधास्वामी, राधास्वामी॥
गुरु नाम की धुन पहचान लिया, प्रकाश में रूप को जान लिया।
मिल गया काल से छुटकारा, राधास्वामी, राधास्वामी॥
राधास्वामी, राधास्वामी, राधास्वामी मैं गाता हूँ।
मैं तेरा साथ सब को तारा, राधास्वामी, राधास्वामी॥

गुरुदेव जगत् व्याप्तं ब्रह्मा विष्णु शिवात्मकम् ।
गुरोः परतरं न किंचित् तस्मै श्री गुरवे नमः ।।
मस्तराम सुतं देवं फकीरचन्दं पण्डितम् ।
परम सन्त दयालं च फकीरं बन्दे जगद् गुरुम ।।

राधास्वामी ! आज मैं थोड़ी देर से इसलिए आया क्योंकि आन्ध्र प्रदेश का लम्बा दौरा करके आया हूं। यह दौरा भी जरूरी था क्योंकि परम दयाल जी महाराज की ऐसी आज्ञा थी। उन्होंने मुझे सन् 1981 की वैशाखी पर अमेरिका से बुलाया था। उस वक्त उन्होंने मुझे लिखा था कि अगर तू जनवरी में आ जाये तो मैं तुझे आन्ध्र प्रदेश में ले जाना चाहता हूं ताकि वहां के लोगों से तुम्हारा परिचय करादूं। यह तो उन परम तत्व अवतार की लीला थी। जब वह परम तत्व मनुष्य के रूप में होते हैं तो मनुष्य का सा ही व्यवहार करते हैं। चूंकि मुझे छुट्टी नहीं मिल सकती थी इसलिए उस वक्त तो मैं आ न सका। लेकिन अब आन्ध्र प्रदेश गया तो ऐसा लगा जैसे वह खुद ही हर जगह हर सत्संग में मेरे साथ चल रहे हैं।

मैं नहीं जानता था कि मैं क्या कह रहा हूँ. मैं तो गुरु नाम की लहर में बिल्कुल बह जाता था। क्योंकि उन्होंने मुझे यह आज्ञा दी थी कि तू यह काम करना इसलिये मुझ में यह लहर उस समय बहती है जब मैं सत्संग कराता हूं। जब वह लहर बहती है, धीरे धीरे, ज्यों-ज्यों शब्द निकलते हैं, विचार आते हैं, त्यों-त्यों सुरत ऊपर चलती जाती है, जबान काम करती जाती है, मन काम कर रहा है लेकिन मन से परे कोई ताक़त है जिसकी लहर उस बहाव को तेज करती जाती है। और जैसे नहर या दरिया में जब बहाव तेज गति से बहुत ज्यादा आता है तो नहर या दरिया का पाट टूट जाता है और लहर ही रह जाती है। इसी तरह उस समय मैं अपने आपको भूलकर लहर का ही रूप हो जाता हूँ। मैं सोचता हूं आपकी भी यह हालत आयेगी क्या ? वह लहर आपके अन्दर भी बह रही है। आपमें भी यह हालत उस समय आयेगी जब आप आप भी महाराज के कहने के अनुसार अपना जीवन बितायेंगे।

जहाँ-जहाँ मैं गया मैंने महसूस किया कि हर जगह सबका अथाह प्रेम था। कई चीजें मुझे वहां ऐसी पता लगी जैसे महाराज जी पहले ही कोई काम तैयार कर गये हैं। बम्बई में एक चीज हमें नई पता लगी कि पण्डित पृथ्वी-नाथ जी अपने जेब में दो साल से एक कागज छुपाये हुए फिर रहे थे और कहते थे "मैं उसको बार-बार पढ़ता रहता था।" हमने कहा दिखाओ तो सही भई, क्या कागज है ? उन्होंने वह कागज दिखाया। मेरे लिए वह कोई नई चीज नहीं थी। वह एक चिट्ठी थी जो परमदयाल जी महाराज ने मुझे लिखी थी लेकिन मुझे यह मालूम नहीं था कि उन्होंने सन 1981 की बैसाखी के अवसर होशियारपुर से निकलने वाली पत्रिका 'जनता जनार्दन' के विशेषांक में भी वह चिट्ठी अपने साथ बैठे हुए मेरी फोटो के साथ छपवा दी थी और लिखा था "कि मेरे बाद में यह मेरा काम करेंगे। उस चिट्ठी में और, उन्होंने यह तो कहा कि तू एक उद्देश्य से दुनिया में आया हैं। मेरी जात–ऐ–पाक के सामने मैं सिर झुकाता हूं। और मैं तेरे आने की इन्तजार कर रहा हूं। यह जो सन्तों का काम है मेरा काम और तुम्हारा काम, दाता दयाल का काम है, वह तुम्हें करना होगा। दुनिया में चूंकि आजकल के प्रजातन्त्र के तरीके के कारण नफरत, ईर्ष्या व बुराइयों के कारण संसार में तबाही तो जरूर होगी, कोई इसे रोक नहीं सकता लेकिन उस तबाही के बाद यह जो धर्म हैं उस वक्त यह लोगों को बचायेगा। मगर इससे पहले उसके अन्दर उन्होंने यह लिखा कि अब मेरा दुनिया के अन्दर आने का जो उद्देश्य था वह किनारे पर पहुँच गया हैं। मैं किसी वक्त भी जल्दी से जल्दी इस दुनिया से जाने के लिए तैयार हूं।" कहने का, मतलब यह है कि परम-दयाल जी महाराज को मालूम था कि वह अगली बैसाखी पर नहीं होंगे। इसलिए उन्होंने उसी बैसाखी पर उस पत्रको छपवा दिया था। अब यह समझ में आ रहा है कि उन्हीं की Current या लहर से यह सब कुछ चल रहा है कि मैं एक महीने से भी अधिक जगह—जगह गया। सत्संग के सिल-सिले में दो-अढ़ाई या कभी तीन घण्टे सोना होता था। फिर भी उनकी कृपा से सेहत ठीक ही रही सिवाय इसके कि थोड़ा बहुत गला खराब हो

गया था। इसी कारण आज मैं देर से आया जिसके लिए मैं आप से क्षमा चाहता हूँ।

आज के पढ़े गये शब्द में गुरु नाम या सतनाम की महिमा है। गुरुनाम है परमतत्व का। गुरु उस सत्ता का नाम है जो अनादि है, अनन्त है और अनामी है। राधास्वामी मत की खासियत विशेषता क्या है ? सत्संग, सतगुरु और सतनाम। सत्संग एक स्कूल है जहाँ पर आपको शिक्षा दी जाती है। यह शिक्षा दो किस्म की दी जाती है। एक वह शब्द जो सतगुरु बोल रहा है और आप सुनते हैं। उस शब्द को सुनने के बाद आप अगर जो उन्होंने कहा उसे पकड़ लें और उस पर अमल करके उसको अपने जीवन में उतार ले अर्थात उसके अनुसार करनी करें तो ही सत्संग का प्रभाव भी होता है। एक बात को पकड़ लो, उस पर अमल करो।

शिष्य या सत्संगी कौन है, उसके क्या लक्षण होते हैं ? उसके चार लक्षण हैं :—

काकचेष्टा, वकोध्यानं, श्वान निद्रा और हंसवृत्ति।

काक चेष्टा :-

कौए जैसी कोशिश। कौआ बड़ा समझदार होता है। वह चेष्टा करता है और कभी हटता नहीं है और लगातर कभी कहीं, कभी कहीं खोज करने चला जाता है। इसी तरह से सत्सगी वह है जो शान्ति की खोज लगातार चेष्टा अर्थात हिम्मत और प्रयास करता रहे हैं।

बको ध्यानं :

बक कहते हैं बगुले को। बगुला क्या करता है ? बगुला भक्त बैठा हुआ है मस्ती से। ऐसा लगता है कि बहुत शरीफ है। मछली समझती है कि वह ध्यान लगा रहा है। ज्यों मछली आई झट से पकड़ ली। इसका भाव यह है कि जो आप सत्संग सुन रहे हैं, जो बात सत्संग के अन्दर आपके मतलब की आई, जो बात आपको जची कि यह मेरे पर लागू होती है झट उसे पकड़ लिया।

सत्संगी का तीसरा लक्षण है 'श्वाननिद्रा'। जिसका मतलब है

कुत्ते की तरह नींद करना। कुत्ता खटका पाते ही एक क्षण में जाग उठता हैं। इसी तरह से सत्संगी अगर अज्ञान की निद्रा में सोता हो तो वह ज्ञान का शब्द सुनने से कुत्ते की तरह शीघ्र जाग उठेगा।

सत्संगी का चौथा लक्षण 'हंसवृत्ति' है। हंस में यह गुण होता है कि वह दूध और पानी को अलग कर देता है। अगर हंस को पीने के लिए दूध दिया जाये तो वह दूध की सफेदी पी लेता है और पानी छोड़ देता है। इसी तरह से सत्संगी को चाहिये कि वह अपने मतलब की बात समझ ले और बिना मतलब की बात छोड़ दे। इस जगत में अच्छाई, बुराई, सत्य और झूठ मौजूद हैं! सत्संगी को चाहिए कि वह हंस की तरह अच्छाई को अपना ले और बुराई को छोड़ दे। सत्य को अपना लें और झूठ को छोड़ दे।

इन चार लक्षणों वाला सत्संगी सच्चा अधिकारी हो जाता है। वही सत्संग से लाभ उठा सकता है। वह ही सतगुरु को समझ सकता है और उसी को नाम दान दिया जाता हैं।

परम तत्व का ज्ञान देने वाला गुरु ऐसे सत्संगी के लिए साक्षात ब्रह्म ही होता है। इस विचार वाला सत्संगी यह समझ लेता है कि गुरु अविनाशी हैं। वह गुरु की वेष-भूषा या उसको शरीर से सम्बन्ध नहीं रखता क्योंकि ये चीजें असली गुरु नहीं हैं। असली गुरु तो ज्ञान देने वाले गुरु की अविनाशी सत्ता है। इस बात को समझकर जब सत्संग से गुरु की तरफ ध्यान लग जाता हैं. तब वृत्ति टिक जाती है। गुरु की किरणें काम करती हैं। बार-बार सत्संग में आने से इन किरणों के द्वारा शिष्य गुरु जैसा बन जाता है। इसलिये ही सन्तमत में सत्संग, सत्तगुरु और सत्तनाम की महिमा है।

सत्संग से मन शुद्ध होगा और सत्तगुरु व नाम की सच्ची समझ प्राप्त होगी। सुरत से अन्तर में शब्द की धुन को पकड़ने का नाम राधास्वामी है। सुरत-शब्द योग की कमाई करते हुए आप सहज में ही इन तमाम दर्जों को अनुभव कर सकेंगे जो आज दाता दयाल जी महाराज के आज के शक में आये हैं और अन्त में मन को छोड़कर शब्द में लय होने से अपनी जात, अपने आदि घर या मालिक तक रसाई हासिल कर सकते हैं। सबको राधास्वामी!

पृष्ठ ४ का शेष (दयाल मत)

माया मत और काल मत की यह दशा है।

सन्त मत को दयाल मत कहा जाता है। यह क्यों ? क्योंकि वह मनुष्य की दृष्टि को आपेक्षिक सम्बन्धों से ऊँचे लाने की व्यवस्था करता है। ऊंचा और नीचा यह भी तो आपेक्षिक शब्द हैं यहाँ भी तो उसी बात के डर की सम्भावना है जिसका जिक्र ऊपर किया गया है। यह सवाल हर व्यक्ति कर सकता है लेकिन यहाँ एक रहस्य हैं जो सच्चे जिज्ञासू को पहिले समझकर तब आगे बढ़ने का यत्न करना चाहिये।

वह यह है कि सन्त मत न पूरा ज्ञान मार्ग है न पूरा उपासना मार्ग है और न उसे कर्मकान्ड का ही मार्ग कहा जाता है. बल्कि वह ज्ञान और उपासना का सार है। वह न ज्ञान का खंडन करता है और न उपासना का खंडन करता है, बल्कि उसका मार्ग ज्ञान और उपासना के बीचोबीच चलता है। कहने का मतलब है कि वह न दीन दुनिया का मार्ग है और न इनसे पृथक ही है। वह ज्ञान और उपासना को शामिल रखते हुए कर्म और करनी को अपना साथी बनाता है। यह एक तरह पर असली मार्ग है जिसमें ज्ञान और ज्ञान का प्रेम दोनों ही शामिल हैं। पहिले तो यह मनुष्य के विचारों को निर्मल कर देता है ताकि मन में भ्रमात्मक विचार न रहें, वर्ना यह विचार आगे चलकर परेशानी का सामान पैदा करेगा और फिर मनुष्य के बहक जाने का भय लगा रहेगा। एक बात तो यह हुई। अब दूसरी वात जो प्रत्येक व्यक्ति को समझनी चाहिये वह यह है कि सन्त मत या राधास्वामी पन्थ अपने अभ्यास द्वारा मन के घाट बदलने और बदलाने की युक्ति सिखलाता है और जहाँ यह युक्ति हाथ आ गई फिर आपेक्षिक बातों के भय हृदय से सदा के लिए दूर हो जाते है।

खबरदार ! जब तक उस रहस्य को न समझ लो आगे की ओर कदम न बढ़ाओ वर्ना धोका खा जाओगे। इसी एक रहस्य पर दारमदार हैं राधास्वामी मत की समझ का ! अगर समझ लिया तो सम्भव हैं कि तुम उससे अध्यात्मिक लाभ उठा सको और इसी जीवन में अपने आप को कुछ का कुछ बना सको। और यदि नही समझा, तो फिर या तो वाचक ज्ञानी बन

जाओगे। या अभ्यास और साधन करके सिद्धि शक्ति और चमत्कारों के लपेट में आकर फंस जाओगे, और या अपने पंथ के पाबन्द होकर पक्षपाती, संकीर्ण हृदय और कट्टर होकर दूसरे सामाजिक धर्मों के अनुयाईयों की तरह "पर उपदेश कुशल बहुतेरे" वाली मिसाल तुम पर लागू हो जायगी। यह चार प्रकार के भय हैं जिनसे बचने और बचकर रहने की अत्यन्त आवश्यकता है। लोग आजकल राधास्वामी मत में शामिल तो हो गये मगर हृदय के संकीर्ण, कट्टर और पक्षपाती बन गये। संकीर्णता और पक्षपात अध्यात्मिक रोग हैं। मालिक आशीर्वाद दे कि मनुष्य को इसकी हवा न लगने पावे वरना राधास्वामी मत वाले भी मतवाले होकर अपनी बढ़ाई करते हुये दूसरों को तुच्छ समझने लगेंगे और दिल दुखाने के अपराधी होकर राधास्वामी मत के असली ध्येय से बंचित हो जायेंगे।

रहस्य यह है कि :—

"राधास्वामी मत सत्संग और अभ्यास कराते हुये अभ्यासियों के मन के घाट को बदलकर सुरत के घाट पर लाता है। और मन के जीवन के बदले सुरत के जीवन का अधिकार प्रदान करता है।"

लेकिन कठिनता यह है कि हजारों में एक आदमी ऐसा नहीं मिलता जो मन के घाट बदलने के रहस्य को समझता हो। मन में चंचल है। मन में चंचलता और निश्चलता हैं जब तक मन मन के स्थान में रहता है, मनन शक्ति के कारण चंचल बना रहता है मगर जब यह मन सुरत के घाट पर के घाट पर बैठता है तब यह निश्चल हो जाता है या निश्चल होने लगता है इसको केवल एक बार समझलो फिर सदा के लिए तुम मन की मनन और चंचल शक्ति पर विजय प्राप्त करोगे।

यह मन ही है जो अहंकार के स्थान पर बैठकर तुम को अहंकारी, लालच के स्थान पर लालची, काम के स्थान पर बैठकर कामी, क्रोध के स्थान पर बैठकर क्रोधी और मोह के स्थान पर बैठकर मोही बना देता है। यह मन ही है कि जो तुमको दीनता के स्थान पर बैठकर दीन, निर्लोभता के स्थान पर बैठकर निर्लोभी और अकाम के स्थान पर बैठकर अकामी और

अक्रोध के स्थान पर बैठकर अक्रोधी और अमोह के स्थान पर बैठकर अमोही कर देता है। तुम यदि थोड़ा प्रयत्न करो तो इसे अपने प्रतिदिन के कारोबार में देख सकते हो। यही तुम को अपनी-अपनी बैठक बदल-बदलकर सदाचारी, दुराचारी, सावधान, असावधान बनाता रहता है। जो कुछ है इसी का खेल है। इतना तो तुम समझ सकते हो और शायद इस सचाई को मानोगे, लेकिन अभी तक विषय स्पष्ट नहीं हुआ। आगे चलकर हम और स्पष्ट किये देते हैं।

एक व्यक्ति को उन्माद का रोग हो गया है। उसका कारण क्या है? कारण यह है कि मन ने इस शरीर में ऐसी बैठक बना ली है जिसमें मनन शक्ति का अधिक अभाव है। अब वह बेतुकी हाँकता है। निडर हो गया है! किसी की परवाह तक नहीं करता। न उसे मरने का डर है, न जीने की इच्छा है। आदमी तो आदमी ही है। उसमें यह दोष कहाँ से आ गया? इसका कारण बता दिया गया। बहुत से उन्मत तुमको ऐसे मिलेंगे जो दिन में दस-बीस, पच्चीस सेर खाना खा जाते हैं और रात दिन खाते रहते हैं मगर तृप्ति नहीं होती। मगर तुम तो नियत मात्रा से अधिक भोजन खा लो और देखो कि स्वास्थ्य का क्या हाल होता है! सम्भव है तुमको इस पर विश्वास न आये मगर कभी-कभी ऐसे रोगी किसी-किसी जगह दिखाई दे जाते हैं। तुम किसी अनुभवी वैद्य से पूछकर सन्तुष्टि कर सकते हो। इसी तरह किसी-किसी को ऐसा रोग हो जाता है कि रात-दिन बहुत अधिक पानी पीते रहते हैं, मगर प्यास कभी नहीं बुझती। मैंने ऐसे आदमी भी देखे हैं कि काम के आधीन होकर रात-दिन बहुत-सी स्त्रियों से काम-भोग करते है और फिर भी तृप्ति नहीं होती। इन सब में यह शक्तियाँ कहां से आ जाती हैं? वही कारण है कि मन का घाट बदला हुआ है।

पूरब के जिलों में एक कहावत है। जब वह किसी को बदला हुआ पाते है तो यह कहते हैं कि "इसके मन का कोठा बदल गया। मन अपने कोठे से दूसरे कोठे में चला गया" और यह शब्द बहुत स्पष्ट हैं। व्याख्या की आवश्यकता नहीं है।

मन जब तक अपनी असली हालत में रहता है तब तक वह सोचने-समझने के लिये बाध्य रहता है और इसी अधिक सोचने-समझने के अभ्यास में उसकी चंचलता का रहस्य छुपा हुआ है ! वह भव के समय कर्त्तव्य विहीन हो जाता है । निर्भयता की दशा में शान्त रहता है ।

दयाल मत इस मन के कोठे बदलने की युक्ति सिखाता है, लेकिन वह युक्ति इस प्रकार की नहीं है कि मन प्रारम्भिक अवस्था में ही मर जाय। यह अत्यन्त काम की वस्तु है। इससे हर मण्डल में काम लेना आवश्यक है। यह जीवित रहे मगर यह ऐसी जगह जरूर पहुंचा दिया जाय कि चंचलता की आदत को छोड़ दे। लोक और परलोक का काम भी करता रहे और साथ-ही-साथ उसको आन्तरिक सुख भी मिलता रहे। यह स्थान सुरत का स्थान है जिसका पता इस जमाने में राधास्वामी मत देता है।

बात सहल है। कर्ता उस्ताद करता शागिर्द ! जो करते हैं वह समझते हैं, जो नहीं करते वह नहीं समझते ।

सुरत के स्थान के भेद न जानने से प्रायः अभ्यासी और साधक एक स्थान पर खिंच जाते हैं। जिसने अलल टप्प ढंग में अभ्यास तो किया मगर सुरत के स्थान या स्थानों का उसे पता नहीं मिला तो परिणाम यह हुआ कि यह किसी विशेष आन्तरिक स्थान के प्रकाश को देखकर उसमें अटक रहा। उसमें सिद्धि शक्ति तो आ जायगी क्योंकि एक जगह पर खिंच गया है परन्तु व्यर्थ, क्योंकि आत्मिक उन्नति रुक गई। अब उसका मन न नीचे उतरता है, न उस विशेष स्थान से ऊपर जाता है। बीच में लटका हुआ है। उससे किसी को भी आत्मिक लाभ नहीं पहुंचता। यह दशा कदापि अच्छी नहीं है। जब तक कोई अनुभवी अध्यात्मिक गुरु न मिलेगा उसकी दशा कभी न बदलेगी।

राधास्वामी मत इसी कारण से क्रमशः सुख के स्थानों का पता बताकर अपने अभ्यासियों को उन्नति का राज-मार्ग दिखाता रहता है कि कोई किसी जगह न अटकने पावे, वरना उसका अकाज हो जायगा और वह उन्हीं उन्मत्तों में शुमार किया जायगा जिनकी एक मिसाल ऊपर दे दी गई है।

यह इस दयाल मत की विशेषता है।

शब्द

दुर्गा दास 'चमन'

रे साधो, गुरु का ज्ञान बताऊँ ।

1— गुरु जो सन्मुख बैठा सगुण रूप वह मानें ।
सगुण रूप में निर्गुण रहता गुरु मुख बात यह जानें ।।
सत्संग महिमा सब से ऊपर गाए सब ने गाने ।
द्वैत भाव है जगत की लीला भजन ध्यान से जाने ।
काट छाँट के सब दर्शाऊं ।
रे साधो, गुरु का ज्ञान बताऊँ ।।

2— झूले में है सब बैठे झूला सब से न्यारा ।
ऋषि मुनि और देव व दानव सब को इसने मारा ।
कभी तपी और देव हैं बनते कभी मानुष अवतारा ।
ऊपर जाते नीचे आते यह है जग व्यवहारा ।।
सतगुरु कृपा का गुण गाऊँ ।
रे साधो, गुरु का ज्ञान बताऊँ ।।

3— गुरु गुरु में भेद है भारी समझ के काम बनाना ।
गुरु अजर और अमर सदा है निहंकार निर्वाणा ।।
गुरु सदा ही गुरु पने से रहता है अलगाना ।
काम गुरु का जग में इक है सच्ची बात बताना ।।
गुरु कृपा से सच्ची बात सुनाऊँ ।
रे साधो, गुरु का ज्ञान बताऊँ ।।

4— गुरु ज्ञान की मूरत प्यारे गुरु की बात प्यारी ।
काम, क्रोध और मोह लोभ से गुरु की बात न्यारी ।।

सच्चा सतगुरु धुर धाम का मुक्ति पथ दर्शाए।
जिसने माना सच्चे मन से वह ही काम बनाए॥
फकीर कृपा से भेद अगम का सब को आज जताऊं।
रे साधो गुरु का ज्ञान बताऊं॥

शब्द

दुर्गा दास चमन

सत्संग करो ध्यान से भाई।

1 — ऐसी प्राणी करे कुछ दिन, सतसंग महिमा जागे।
सतसंग में त्राटक लग जावे गुरु नैनन के आगे॥
ज्ञान ध्यान की सारी समझ है आई।
सतसंग करो ध्यान से भाई॥

2 — सतसंग में सब संशय भागें, यह है एक निशानी।
शब्द चोट हृदय में लागे, ऐसी अद्भुत वाणी॥
सब सन्तों ने ऐसी महिमा गाई।
सतसंग करो ध्यान से भाई॥

3 — पूर्ण पुरुष का मस्तक जागे, आंखें दया समाई।
राधास्वामी की कृपा से सारी समझ है आई॥
परम दयाल हो गए सहाई।
सतसंग करो ध्यान से भाई॥

क्षमा याचना—

अलीगढ़ शहर में कर्फ्यू लग जाने के कारण हम मार्च का अङ्क समय से नहीं भेज सके इसके लिए क्षमा चाहते हैं।

"मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार पत्र (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के अनुसार अपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़। उत्तर प्रदेश
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़
५—सम्पादक का नाम		श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता		भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नग[illegible] अलीगढ़
६—स्वत्वाधिकारी	:	श्रीमती सुधा मी[illegible]
संरक्षक	:	परमदयाल

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूँ [illegible] जानकारी और विवरण के अनुसा[illegible]

हस्ता[illegible]

दिनांक १५ अक्टूबर, १९७८

Regd. No. L-ALG - 28

पुस्तकें

हमारे यहां
महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज
कृत
हिन्दी की आध्यात्मिक, धार्मिक,
स्त्री उपयोगी,
स्वास्थ्य व मनोविज्ञान सम्बन्धी
पुस्तकें तथा 'शाही' और 'मोती'
सिलसिले के उपन्यास तथा
...ाल फकीरचन्द जी महाराज
उच्च कोटि की अमूल्य पुस्तकें
मिलती हैं।
...सूचीपत्र मंगायें।
...ब का अलग है।
...र्ड डाक या रेल से
...ी जाती हैं।

...पता :—
...नय
...नो
...जनगर,
...०)

ग्राहक सं० 936

Sri Ganpathy Kunde ...
V- Tan...
P.O. Tadkal via Pitlam
Medak AP

...l, Data Dayal Printers, Al...